विषै नहिं होय रोप्य विषै जान्यौ परै साध्यवसाना सोय। रोप्य इहां स्याम गुन, रोप्य विषय शृंगार काम सों जान्यौ परै है। किंवा तुम्हें देषें विना तुमसों मिलै विना हमैं कछु नजरि नही आवै है। तुम्हारे तन की झांई जव हम विषै परै है तव हमें स्याम अंधकार जो है हरित दिसातहि विषै द्युति प्रकास होत है। जासों अति आसक्ति होय ताहि विना अंधकार जगत मै और कविनि ने कह्यौ है। हमारो वनायो मोहनलीला ग्रंथ ताको कवित्त –

लोचन की गति कों गहि चित्त कियो हरि माधुरी माहि वसेरो। जौ लगि गाय चरावन जाय विते छिनहू छिन ज्यौं विधे केरो। कोटिक भान उगै असमान मै ह्वै किन पूरनचंद कौ घेरो। तौ भी सषी सुनि गोपसुतानि को कान्ह विनां व्रज होत अंधेरो।

—★—

अपने अंग के जानिकै। जोवन नृपति प्रवीन। स्तन मन नैन नितंव कौ। वडौ इजाफा कीन [००२][4]

اپنے انگ کے جانکیں جوبن نرپت پربین · استهن من نین نتمب کون برو اجاپهاو دین
[ظا۰ ۰۰۲]

अन० : सषी की उक्ति नायक प्रति। स्तुति करति है। नवजोवन भूषिता।

नर० : मुग्धा ज्ञातयोवना। सषी को वचन सषी प्रति। हे सषी श्रीराधाजू के सरीर कै विषे जोवन रूपी ये नृपति प्रवीन नै अमल कर्यौ। स्तनां कौ मन कौ नैनां कौ नितंव कौ आपने अंग के जानिकरिकै इनकौ ईजाफा क० घनौ सौ वधारौ दीनौ है –

आपने काम समर्थहि अंग के चेत चितै रस अद्भुत भीने। जोवन नाम महावल भूप नै वैठ दिवांन प्रवीन नवीने। साचे सोहामने चातुर चक्र से साचेई मानो मनोज ने कीने। चित्त उरोज सुनैन नितंव कौ रूप वडेई इजाफाई दीने [नर० ००२] [5]

कृष्ण० : इह नाइक नवजोवनभूषिता मुग्धा है। सषी कौ वचनु सषी सौ –

जोवनभूप महापरवीन विचछनता इहि रीति ठई है। राज लह्यो नवलातन को कटिसत्रु की संपति लूटि लई है। दूरि कियो सिसुता के सहाइक चातुरता चितु चारु भई है। नैन उरोज नितंवनि कौ अपने गनिकै वढवारि दई है [कृष्ण० ००२][6]

---

[4] अपने – अपनें - उ०; अपनैं - न०; अपनै - गा०वे०मि०। अंग – अंगि - शि०गा०; अँग - पा०; तन - ह०। के – कै - शि०वा०; कें - न०। जानिकै – जानिकैं - उ०को०मि०मु०; जांनिकै - वा०गा०ह०; जांनकै - स०; जांनिके - न०। जोवन – योवन - गा०; यौवन - वे०। नृपति – नृपत - गा०। स्तन – तन - शि०वा०नी०गा०वे०स०ह०; स्तनु - मि०। मन – मनु - मि०। नैन – नैंन - उ०को०शि०स०ह०; नेंन - मो०मु०। कौ – कौं - उ०को०गा०ह०गा०ह०; को - शि०पा०मो०नी०। वडौ – वडो - को०वा०पा०मो०वे०; वडा - नी०। इजाफा – अजाफा - को०शि०; ईजाफा - मो०गा०; इजाफौ - न०; वजाफा - मि०। कीन – कींन - उ०; कीन्ह - नी०। [००२]

[5] अंग – आंग - वे०। 'नै' तुकांत - गा०।

[6] लह्यो – लयो - नी०; लह्यौ - मि०; लहो - भा। कटिसत्रु – कटिसूत्र - भा०। चारु – चाह - नी०; चार - मि०। वढवारि – वढिवार – मि०गा०।

हरि० : सषी नायका सों स्तुति करति है। अपने तन के, आपने पच्छ के, जान्यो जोवन जो प्रवीन राजा है, आपने शत्रु-मित्र कों जानत है। तन कुच ताको मन कों नेंन कों नितंव को वडो इजाफा अधिकाई कीनी। कुच कों पहार करि वर्नत है, नैंन कों कान ताई, नितंव को वडो वर्नत है; मन तौ वडोई है। इहां हेतुउत्प्रेक्षालंकार है। कै को अर्थ किधों आपने अंग के जानि हेतु इजाफा को तर्क।

—★—

अर तैं टरत न वर परे। दई मरक मनु मैंन। होडीहोडा वढि चले। चित चतुराई नैंन [००३][7]

ار تین ترت نہ بر پري دئی مرک منو مین ۰ ہوڈاہوڈي برہ چلی چت چترائی نین [ظا۰ ۰۰۳]

अन० : सषी की उक्ति अंकुरितजोवना। उत्प्रेक्षालंकारः।

नर० : मुग्धा ज्ञातयोवना। सषी को वैन सषी प्रति। हे सषी श्रीराधाजू के सरीर कै विषै मैंन रूप जो दई क० नृपति तिनके मरक क० घोरा है सो वर क० जोरावर परे है सो अर्‌यै तै टरतु नांही हैं। सो कैसे घोरे कि चित की तौ चातुरता और नैन की चातुरता सो ऐ दोनु होडाहोडी वढते चले जात है। ए चंचलता व्यापंत है। और विचार मैंन नै इनाकौ मरक क० इसारतन दीनी है तातैं होडाहोडी वढत है।

> कोऊ मनोज अनोपम साहसी वाही नै मानो मरक्क दई है। तातैं अरै तै टरै नही जोर तें पूरन पोंन की पच्छि लई है। एकही वेर अचानक धावत होर वदी ओ गरूरमई है। चच्छुए चातुर चित्त चले चढि रूप अवै इह भांति भई है [नर० ००३]

कृष्ण० : इह नाइका कौ जोवनु आयो है, सो चतुराई अरु नेत्र वढन लागे सषी सषी सो कहति है –

> नैननु की वढवारि लषै चित चातुरी की उमगी अधिकाई। चातुरी की अधिकाई लषै तव नैननि और गही सरसाई। कृष्ण कहै वरु वांध्यो दुहूनु इतै परतीति मनोज की पाई। होडियैहोडा चले वढि मानौ विलोचन औ चित की चतुराई [कृष्ण० ००३][8]

हरि० : सषी नायक सों कहति है। अर तें, हठ तें, नहीं टरत हैं। वर परे, वल भरे हैं, मानों मेंन काम मरक दीनी है। उत्कर्ष दियो है, देषें कौन जीतै, याको नाम मरक।

---

[7] तैं – ते - शि०वा०भा०नी०; तें - मो०मु०ह०; तै - गा०वे०। टरत – ढरत - भा०। परे – परें - मु०; परै - वा०। मरक – मुरक - पा०मो०; मरकु - मि०। मनु – मन - शि०भा०; मनों - मो०। मैंन – मेंन - वा०मो०गा०; मैन - शि०नी०ब'आ०। होडीहोडा – होडीहोडा - उ०मो०; होडाहडी - को०; होडाहोडी - शि०मि०पा०मु०स०ह०; होडीहोला - भा०; होडोहोडी - वा०; होडाहोडी - न०गा०वे०। वढि – उ०शि०वा०मो०नी०मि०भा०वे०गा०ह०; वढ - को०मु०न०स०। चले – चलें - न०। चित – चितु - उ०मि०गा०वे०। चतुराई – चितुराई - मु०। नैंन – नेंन - मो०मु०; नैन - शि०पा०वा०भा०नी०गा०वे०। [००३]

[8] वढवारि – वढिवारि - नी०; वढवार - मि०; वधिवारु - मु०। लषै तव – लषी तव - मि०; परतीति – परचीस - मि०; होडियैहोडा – होडीयेहोडी - मु०।

अग्र भाग सी है किंवा मनमथ को वान प्रसिद्ध है, नेजा प्रसिद्ध नांही, प्रसिद्ध विरुद्ध दोष है तो ऐसो अर्थ जानिए, मन को मथै, पीडा देइ, एसो जो कोई नेजा, ताकी नोक सी। पूर्णोपमा।

— ★ —

जुवति जोन्ह मैं मिलि गई। नैक न होति लषाइ। सौंधे के डोरै लगी। अली चली संग जाइ [००७][18]

جوت جون مين مل کي پرت نہ نيک نہ ہوت لکھاي • سوندہي کے دورين لکي الي چلي سنک جاي [ظا• ۰۰۷]

अन० : सषी की उक्ति सषी प्रति, नायका परकीया शुक्लाभिसारिका। उत्तम काव्य। उन्मीलित मुद्रा की संसृष्टि। उन्मीलित सो जानि जहां सदृश वस्तु मिलि जाय। पें काहू इक भाव सों भासे भेद वनाय। मुद्रा प्रस्तुत पद विषे ओरें अर्थ प्रकास। जानि लीजियो जानिमन जिनके वुद्धि विलास। लषाइं सो दिषाई नेक न होत। वहुत होत हे अलि सोधे के डोरे तें चली जात इति या अर्थ की मुद्रा करी है।

नर० : सुक्लाभिसारिका सषी को वैन सषी प्रति, हे सषी युवति ही सो तो जोन्हि क० चाँदनी तिनकी जोति मैं मिल गई है सो नैंकही जानी जाति न है, पै सौंधे को जो डोरौं आवत है, ताके गैल जौ अली है सो साथि चली जाति है अरु राधा की छाया जोन्ह सार सी हैं –

> कामिनी जौन्हि की जामिनी मांझि गई मिलि नैकहु जात न जानी। साजे सिंगार सुधारे सवै तन घोर घनो धनसार लै पानी। पाछेही जात ही जानत वात न एक अली अपनै मन मानी। जात कितौ नही जान्यौ सुजान पै यौ मग जान्यौ सुगंधि निसानी [नर० ००७] [19]

कृष्ण० : इह नाइका सुक्लाभिसारिका, सषी कौ वचनु सषी सौं –

> तन की गुराई तरुनाई की निकाई छाई जाकी उजराई ते उज्यारी उजराति है। सारद निसां मै प्यारी विसद सिंगार साजै गजगमनी की नीकी सोभा सरसाति है। चली अनुरागी मनमोहन के मिलिवे को चांदनी मै मिलि गई क्यौंहू न लषाति है। लपट सुगंध की अछेह उपटति अंग ताही की तरंग लागी सषी संग जाति है [कृष्ण० ००७][20]

---

[18] जुवति – जूवति - वा०; युवति - न०। जोन्ह – जौंन्ह - उ०; जौन्ह - शि०मि०; जोन्है - वा०; जोन्हि - न०गा०वे०। मैं – मै - शि०भा०मि०गा०वे०; में - वा०पा०मु०हृ०; मे - मो०। मिलि – मिल - को०शि०गा०वे०। गई – रही - उ०मु०। नैक – नैंक - उ०मु०स०; नेक - को०भा०; नेंक - वा०वे०; नेंकु - पा०मो०हृ०। न – नि - मु०। होति – होत - उ०मो०स०; हौति - शि०; परति - पा०भा०। लषाइ – लषाय - को०वा०गा०हृ०; लषाई - मो०। सौंधे – सोधें - को०; सोंधे - शि०; सोंधे - मु०स०; सोधे - पा०मो०भा०; सौंधे - न०गा०; •सोंधें - वे०; सोंधें - हृ०। के – कैं - उ०न०गा०; की - पा०मु०हृ०; कै - शि०वे०मि०स०। डोरै – डोरैं - उ०न०वे०; डोरें - गा०हृ०; डोरी - पा०मु०; डोरे - को०वा०मो०भा०। संग – सग - मि०। जाइ – जाय - उ०को०हृ०; जाई - मो०। [००७]

[19] कितौ – किते - गा०।

[20] उजराति – उपमाति - मि०मु०। सारद – सरद - मि०मु०। उपटति – उद्ति - मु०। संग – सम - मु०। भा० प्रति में निम्नलिखित उदाहरण मिलता है –

चंदन चढाइ अंग फूलन सौ गुदी मांग उमगी है मानौ गंग सरद के नीर की। सोहत है सव तन मोतिन के आभूषन मोतिन की जोति सौ मिली है जोति चीर की। मुसिकानि आछी अति दातनि की दिपै दुति तैसियै गुराई कहै सुंदर सरीर की। चांदनी सी वाल मिलि चांदनी मै ऐसी चली जैसे छीरसिंधु मै चलै तरंग छीर की [भा० ००७]

हरि० : सषी सों सषी वचन। यह अभिसारिका जो जुवती है सो जोन्ह चांदिनी में मिलि गई है। नेंकु थोरी भी आपु कों लषायकै कोई तरह सों जतायकै प्रगट नही होति है। किंवा लषाय पद कों रूढ करै तो जाहिर नही होति है, एसें भी जानिए। सोंधा, सुगंध, ताकी डोरि सों, ताके आश्रय सों, अली सषी संग चली जाय है। किंवा अंग औ वस्त्र तास कों सो जोन्ह में मिल्यौकै सकलंक कला मै मिले। अंग में सोधा, अरगजा लगायो है, ताको रंग काहू सों न मिलो, ताकी रसी सों आश्रय सों लगी अली संग चली जाति है। उन्मीलित अलंकार। उन्मीलित सादृश्य तें भेद फुरै तव मान।

— ★ —

हौं रीझी लषि रीझिहौं। छविहि छवीले लाल। सोनजुही सी होति दुति। मिलति मालती माल [००८][21]

ہون ریجھي لکہ ریجہ چبہ چبیلي لال ۰ سونجوہي سي ہوت دوت ملت[22] مالتي مال
[ظا۰ ۰۰۸]

अन० : सवी इति पाठ। लें इहां सानुस्वारः पाठः। दूती की उक्ति नायक प्रति नायिका स्तुति करि ले चल्यो चाहति हैं। तद्गुणलंकार। वा सषी को वचन सषी प्रति। वा नायक प्रति। हे लाल मिलत जो ही सोन मालती माल सी प्रथम वाल भाव में अव द्युति होत नायिका ओर रंग रूप भई है। वा सुरतांत सषी सों सषी कहति हें जो ही सो न सुरतांत करि अति असमर्थ भई है। ओर सै वार्थः।

नर० : मिलाइवौ अंग सोभा सषी को वैन श्रीकृष्णजू प्रति। हो कान्ह, राधिकाजू की छवि लषिकै हौं तौ रीझी हूं, पै तुमहू देषिकैं रीझौगे, सो क्यौंकि जव राधिकाजू के अंग तैं मालती की माला आंनिकै मिलति है, तव मालती की माला तिनकी सोनजुही की सी दुति होति है –

> हौं अपने मन रीझि अवै लषि रीझिहौ आपन तै गिरिधारी। गोरी गुराई की यों छवि छाजत आपनै हाथ विरंचि सुधारी। सुभ्र सरूप सुगंधमयी अति मालतीमाल भले उर धारी। गात की जोति मिलै ते मनो इह सोनजुही सी फवै मन धारी [नर० ००८][23]

कृष्ण० : यह गात वरनन। नाइका कौ अंग की छवि सषी नाइक सौं निवेदन करति है –

> नीकी लसै वृषभानलली नवजोवन जोति जगी अंग अंगहि। ताहि विलोकि लला मन मेरो तौ भोइ रह्यौ अति रीझति रंगहि। छैलछवीले लषै छवि रीझिवौ क्यौं न हियें रसभाउ उमंगहि।

---

[21] हौं – हों - को०शि०मो०मु०ह०; हौ - पा०भा०। रीझी – रिझी - शि०। रीझिहौं – रिझहों - शि०को०; रीझिहौ - पा०भा०मि०मु०; रिझिहो - मो०ह०; रीझहै - स०; रीझहो - वे०। छविहि – छवहि - न०गा०वे०; छविही - मि०। छवीले – छविले - को०; छवीलें - शि०; छवीलै - मु०। सोनजुही – सौंनजुही - उ०न०मि०नी०मु०; सौनजुही - शि०वा०; सोंनिजुही - न०। सी – सो - भा०। होति – होत - शि०मो०भा०नी०न०गा०स०। मिलति – मिलत - पा०शि०; मिलित - मु०; मिलिति - न०। मालती – मालति - शि०को०। [००८]

[22] ملت - مکت - ظا۰

[23] मनो – मतो - गा०।

झलकत झिलमिली ओप अपार झिनै पट झांषित यौ छवि छाजै। जाके विलोकितही वडे तापस आपसै छांडत योग समाजै। जे कविराज वडेई कहावत ते भटके उपमान कै काजै। मेरेई जांन मनौं तरुदेव की सिंधु सपल्लव डार विराजै [नर० ०१६]

कृष्ण० : यह झुलमुलीनि कौं वरनंनु है सु उपमा। सषी नाइक सौं कहै। नाइकु नाइका सौं कहै तो कवि की उक्ति होइ –

जाके करनाभरन व्रष के दिवाकर से नेंन इंदीवरनि की छवि सरसाति है। अंतर ललित झीनें वसन मैं झुलमुली कहै कविकृष्ण झलकति ऐसी भांति है। मेरे जान सागर मैं डार कलपद्रुम की पल्लवनि सहित प्रगट दरसाति है। अधर सुधाधर सुधाधर से वदन में किलकति ललित कपोलनि की कांति है [कृष्ण० ०१६][49]

हरि० : नायक की उक्ति नायिका सों। किंवा सषी की उक्ति नायक सौं। झीने पट में झिलिमिली कर्नभूषन जाको पीपरपत्ता, झोंटना, कहत है, सो झलकति है। अपार ओप कांति सों सुरतरु पारिजात मंदार संतान कल्पवृक्ष हरिचंदन ताकी पल्लव सहित डार मानो सिंधु, समुद्र, में लसति है। उक्तास्पद वस्तूत्प्रेक्षा है। औरि वस्तु करि वस्तु को संभावन जहां होय। उक्तानुक्तास्पद तहां वस्तुत्प्रेक्षा जोय। झीने पट में समुद्र की संभावना, झिलिमिली में सपल्लव डार की संभावना।

— ⋆ —

डारे ठोडी गाड गहि। नैन वटोही मारि। चिलक चौंध मैं रूप ठग। हांसी फांसी डारि [०१७][50]

داري تهودي كاد كہ نين بتوہي مار • چلک چونده مين روپ تهک ہانسي پهانسي دار [ظا• ٠١٧]

अन० : नायक वचन अनुभाव स्मृति संचारी गुनकथन दसा। वचन अनुभाव करि नायक को पूर्वानुराग व्यंगि। रूपठग हांसी फांसी डारि, नेंनवटोही मारि ठोडी गाड गहि डारें। चिलक चोंधि मे, सोई संध्या समें इत्यन्वय। समस्त वस्तु विषय रूपकालंकार।

नर० : नायक के नेत्र लगन, नाइक कौ वैन सषी सौ। हे सषी राधिका के रूप रूपी ये ठग नै देही की चिलक, तिनकी चकाचौंधी मैं हांसी रूपी पांसी डारिकै मेरे नैन रूप वटोही, तिनकौ मारिकै ठोडी की जो गाड, क० षाड, है तिनमैं पकरिकै डार दए हैं। ए राधिका की ठोडी सौं मेरे नैंन लागे हैं –

---

49 इंदीवरनि – ईंदीवरनि - नी०। झुलमुली – झुलमली - मु०। सुधाधर सुधाधर – सुधाधर - नी०। किलकति – किलकित - मु०। की कांति – की द्रुति अधिकाति - नी०। चरणों का क्रम १ - ४ - २ - ३ - नी०।

50 डारे – डाडे - नी०। गाड – गाडि - को०। गहि – कहि, 'क' के ऊपर भिन्न क़लम से 'ग' - उ०; गृहि - गा०। नैन – नेंन - मो०मु०; नैंन - को०स०ह०। वटोही – वटौही - उ०; वटोहि - को०गा०वे०; वटोहि - शि०; वटाऊ - पा०; वडोही - नी०। मारि – मार - मु०मि०; 'र' में इकार बाद में - गा०वे०। चौंध – चौध - मि०; चौधि - नी०; चोधि - मो०; चोंध - को०मु०ह०; चोधी - शि०। मैं – मे - पा०; मै - न०मि०नी०; में - शि०मो०मु०न०ह०। ठग – ठगु - न०मि०नी०; ठगि - वे०गा०स०। हांसी – हासी - शि०मि०। फांसी – फासी - शि०मि०; पासी - नी०। डारि – डार - ऩ०। दोहा लुप्त - भा०। [०१७]

जो वडो दुष्ट सपुष्ट है पाय सै रूप ठगोरी लये ठग जोहै। ताही नै हांसी सोई वडी फांसी लगायकै नैनही जानत को है। ठोडी की गाड मै गाडेई मारिकै नैन वटोही वडे मन छोहै। देह चलङ्कहि चौंध चितै कि छिपाय रह्यौ छवि सौं छल सोहै [नर० ०१७]

कृष्ण० : यह ठोडी की गाड को वरननु नाइक नाइका सौं कहै –

केसनु के वनु के उपकूल तहीं भ्रकुटीगिरि ओट विचारै। चारु लिलार सिंगार की चौंध में देत प्रचंड दगा नहि हारै। फांसी गरे मुसिकानि की पारिकै ठोडी की गाड कुंवा गहि डारै। प्यारी महाठगु तेरो सरूपु दया तजि नेंनवटोहिनु मारै [कृष्ण० ०१७][51]

हरि० : सषी वचन नायिका सों। तेरो रूप सो ठग है। ताने चिलकचोंध में, अंग को जो चाकाचक्यता सो भयो जो चोंध चकचोंधी, जैसे सूर्ज देषि आंषि में चोंध परत है। पहिलैं गहिकै फेरि हांसी सोई है। फांसी ताको डारिकै नायक के नैन, सोई वटोही, ताकों मारिकै ठोडी को जो गाड है, तामै डार्‌यौ। तहांई नैन हैं, तहां सो अन्यत्र जात नहीं। इहां रूपक सर्वांग है। उपमान उपमेय सों अभेद कियो।

— ★ —

कीनेऊ कोरिक जतन। अव कहि काढै कौंन। भौ मन मोहन रूप मिलि। पानी मै कौ लौंन [०१८][52]

كينهون كورک جتن اب كہ كادهي كون ٠ بهو من موہن روپ مل پاني مين كو نون
[ظا٠ ٠١٨]

अन० : उक्ति परकीया नायिका की सषी सों। चिंता संचारी तें पूर्वानुराग व्यंगि। दृष्टांतालंकार।

नर० : नायका कौ चित्त लगन। श्रीराधिकाजी कौ वैन सषी सों, हे सषी ज्यौं पानी के विषै लौंन मिलै त्यौं मेरौ मनु मोहनजी के रूप तै मिलकैं एकत्व भयौ है सो अव कोरिक जो जतन कीजै तौऔ कहि कौन काढै, ए निकलै नही –

कोरि जतन्न कियै मन मेरै कुं को अव काढै सो जानत नांही। भांति भली अंग अंग रह्यौ मिलि छोटो वडौ कोऊ जांनत छांही। जे मन मोहन रूप सौं राचिकै जाइ मिल्यौ मन मोहन मांही। लौंन समांन भयौ जल वीचही लौ न ज्यौ पानी मै जान्यौ न जांही [नर० ०१८]

कृष्ण० : इह नाइका परकीया नवोढा अपने मन की आसक्ति सषी सो कहति है –

---

[51] लिलार – लिलाट - नी०। गरे – गिरे - मु०।

[52] कीनेऊ – कीनैंऊं - उ०; कीन्हेहू - पा०; कीनेंहू - मो०; कीनैऊ - मि०; कीनेउ - स०; किनेऊं - भा०; कीनेहूं - ह०। कोरिक – कोरि, 'क' ऊपर रिक्त स्थान में - को०; कोटिक - भा०ह०। कहि – गहि - पा०भा०। काढै – काढें - शि०; काढेंगो - भा०; काढैं - न०ह०। कौंन – कौंनु - उ०; कोन - मो०; कौनु - नी०; कौंनु - मि०; कोनु - भा०; कोंन - वे०; कौन - शि०ह०। भौ – मो - भा०मि०; भो - को०मो०वे०स०। मन – मनु - उ०नी०न०वे०। मोहन – मौहन - ह०। म्मिलि – मीलि - उ०; मिल - को०मो०न०; मिलिकै - शि०। पानी – पानी - उ०न०मि०मु०वे०गा०स०; पांणी - शि०। मै – मे - शि०नी०। कौ – को - मो०भा०ह०वे०; कौं - नी०गा०। लौंन – लौनु - उ०नी०; लौन - पा०; लोनु - भा०; लोंन - शि०मो०वे०। [०१८]

नायिका की सषी अहेरी सिकारी नैंन हैं। कोई कहत है अहे यह पुरुष की वोलनि नहीं। अहे वहुत ठौर में आवत हैं 'अहे दहेडी जिनि छुवै' रूपकालंकार है।

—*—

दीरघ सास न लेहि दुष। सुष सांईहि न भूलि। दई दई क्यौं करतु है। दई दई सु कवूलि [०५१][123]

دیرکہ سانس نہ لیہ دوکہ سوکہ سانین نہ بہول ۰ دئي دئي کیون کرت ہي دئي دئي سو کبول [ظا۰ ۰۵۱]

अन० : गुरु को वचन मुमुक्षु प्रति। करुनारस। शोक छाई देषकै धैर्य देत है। विलंवादि उदीपन व्यंगि। अनुप्रास जमक की संसृष्टि।

नर० : उपदेस। कवि विहारीदास कहतु हैं रे नर जौ तेरे तांई दुष भयौ है तौ तुं दीरघ सांस लेहु मति अरु सुष भयौ है तौ सांई के तांई भूले मति। ए एक चित राषि सो अव दई दई क० हाइ हाइ क्यौं करतु है जो भगवांन दीनी सौ कवूल करि –

> काहे को सोच करै नर वावरे दीरघ सांस न लै दुषही तैं। साहिव को जिन भूलै भली विधि तोहि कहों सुष की रुषही तैं। ए दई ए दई काहे को वोलत यो सिर आइ परी सो सहीतैं। जो करतार दई अव तोहि को तू लहु राषि ओदारन ही तैं [नर० ०५१]

> जो तूं दुष लहें तो तूं जिन अकुलाइ लै दीरघ उसास चित चिंता मैन इलरे। सुषु तो लहै तो सव भांति सावधान रहि संपति गमन ह्वै कै हरषि न कूलि रे। थिर न रहत एतौ सुषु दुषु होत जात कृष्ण करुनामय की मूरति न भूलि रे। काहे कौ करति अति आतुर ह्वै दई दई जो दई सो भलीभांति जिय सौं कवूलि रे [कृष्ण० ०५१][124]

हरि० : गुरु की उक्ति सिष्य सों। दुष में तूं दीरघ सांस जनि लेहि। औ सुष मैं स्वांई स्वामी भगवान ताहि मति भूलै। दैव दैव क्यौं पुकारत है दैव कर्म दैव जो है भगवान तिन ने जो दियो सो कवूल है। परमेश्वर कों पुकारु यह अर्थ।

—*—

या अनुरागी चित्त की। गति समुझै नहि कोइ। ज्यौं ज्यौं वूडै स्याम रंग।

---

123 दीरघ – देरथ - वे०। सास – स्वासु - भा०; सांस - मो०; सासं - न०। लेहि – लेहु - को०मो०मु०न०वे०गा०स०; लेही - शि०; लेह - पा०मि०; लेइ - भा०। दुष – दुषु - वा०भा०। सुष – सुषु - भा०। सांईहि – सांइहि - शि०वां०मु०; सांई - नं०गा०स०वे०स०ह०; साईहि - पा०मि०; शांईहि - भा०। न – (लुप्त) - वा०; दिन - न०; नहि - वे०गा०स०ह०। भूलि – भूलं - शि०मुं०न०वे०गा०स०ह०। क्यौं – क्यौ - शि०; क्यो - पा०; तू क्यौ - भा०; (लुप्त) - वा०; क्यों - मो०वे०; क्यु - न०; कहा - मु०। करतु – (लुप्त) - वा०; करति - मि०; करत - पा०स०ह०। है – हें - शि०; (लुप्त) - वा०; हो - मो०; हैं - न०। दई दई – (लुप्त) - वा०। सु – स - मु०वे०। कवूलि – कवूल - को०शि०न०मि०मु०वे०गा०स०ह०। दोहा लुप्त - नी०। [०५१]

124 जिय – (लुप्त) - मु०।

त्यौं त्यौं उज्जल होइ [०५२] [125]

يا انراجي چت كي كت سمجهي نہين كوي ٠ جين جين بہيجي سام رنك تون تون
اوجّل ہوي [ظا٠ ٠٥٢]

अन० : कवि भक्ति को महिमा वषानत है। असंगति अलंकार।

नर० : नाइका कौ चित्तलगन। सषी कौ वैन सषी सौ। हे सषी या तौनि केवल चित्तही की अनुरागी देषीयतु है और गति कोई जानति नांही है सो कैसे कि ज्यौं ज्यौं स्याम के रंग विषै डूबति है सो त्यौं त्यौं ज्योति वढ़ति जाति है। ए ज्यौं ज्यौं स्याम कौ चिंतारत है त्यौं त्यौं हरष होत है –

> **या अनुराग रगे चित की गति को समझै इहि जाति सषी री। भूलि गयो भव के सव संभ्रम लोक अलोक की रीति नषी री। ज्यों ज्यों ए वूडत भाति भली घनस्यांमल रंग मै जाइ झषी री। ज्यों ज्यों सवे मिलि मेटि षरीकि मै ह्वै गई उज्जल ओप लषी री [नर० ०५२]**

कृष्ण० : यह अद्भुत रसु भक्त कौ वचन औ अरु नाइका को वचनु सषी सौं होई तऊ संभव। –

> **नैननु माझ रही षुभिकै वह नंदकिसोर की ऊटि सुहाई। प्रांननि में तऊ सालति है कविकृष्ण कहै सुधि आंन सुलाई। या अनुराग पगे चित की कछु अद्भुत रीति कही नहिं जाई। वूड्यौ रहै रंग स्याम में ज्यौही ज्यौं त्यौं त्यौं गहै अति उज्जलताई [कृष्ण० ०५२]** [126]

हरि० : सांतरस कोई साधु को वचन यह जो अनुरागी चित्त है जाको श्रीकृष्ण मैं प्रेम है ताकी गति कोई नहीं समुझै है। जैसैं जैसैं स्याम श्रीकृष्ण के रंग में राग में वूडै है तैसें तैसें उज्वल होत है। स्याम के वूडे उज्वल होय यह विरोध। उज्वल नाम निर्मल विषय वासनारूप मल जात हैं तातैं सुद्ध होत हैं। सब्द में विरोध भासै है। यातें विरोधाभास अलंकार। भासै जहां विरोध सो वहै विरोधाभास। शृंगाररस मैं लिष्यौ है। शृंगार में भी लगावनो। नायिका को वचन सषी सों यह जो मेरो अनुरागी चित्त है नायक के गुन सुनिकैं रंगि रह्यौ है चाह सों भरि रह्यौ है यह जानिए ताकी गति कोई समुझै नहीं ज्यौं ज्यौं श्याम श्रीकृष्ण के रंग में चाह मै वूडै है सो अकुलाय है यह त्यौं त्यौं राजी होयकै उज्वलनाम शृंगार को है शृंगार शुचि उज्वल यह तीनि नामपर्याय हैं। शृंगारमय होत जात है। किंवा सषी सों सषीवचन या नायिका को जो अनुरागी चित्त है रंग भर्यो चित्त है ताकी गति दशा ताकौ कझै काकु स्वर सों नहिं कोई समुझै है

[125] अनुरागी – अनुरागे - को०। चित्त – चित, 'त' पर काटने का चिह्न, 'त्त' - उ०; चित - वा०मि०मु०। समुझै – 'झ' पर 'ए' तथा 'ऐ' मात्राएँ - उ०; समुझे - को०मो०; समुझत - पा०; समझै - शि०मि०न०गा०; समज - वा०; समुझैं - ह०। नहि – नही - उ०शि०वा०मो०गा०। कोइ – कोइ - शि०; कोय - को०मि०ह०; कोई - मो०। ज्यौं ज्यौं – ज्यो ज्यो - पा०; ज्यौ ज्यौ - भा०; ज्यों ज्यों - मो०गा०वे०; ज्युं ज्युं - स०। वूडै – वूडतु - उ०; वूडे - को०भा०; वूडें - शि०; वूड - वा०; वूडत - मो०; वूडैं - ह०। स्याम – श्याम - भा०; शाम - वा०; स्यांम - मि०गा०स०ह०। रंग – रंगु, 'उ' की मात्रा संदिग्ध - उ०; रगु - नी०। त्यौं त्यौं – त्यों त्यों - उ०वा०मो०गा०वे०; त्यो त्यो - पा०; त्यौ त्यौ - भा०; त्युं त्युं - स०। उज्जल – उजल, 'ज' पर २ - उ०; ऊजुल - को०; उजल,'ज' पर बेड़ी रेखा - शि०; उजल - मो०मि०; 'ज्ज' पार्श्व पर - मु०; उज्वल - गा०ह०। होइ – होय - को०मो०मि०ह०; हौइ - शि०; होई - नी०। [०५२]

[126] ऊटि – उठि - मु०। सालति – सौरति - मु०। सुधि आंन सुलाई – सुधिऊ न भुलाई - नी०।

सवही समुझै है। स्याम जो है कृष्ण सो ज्यौं ज्यौं याके चित्त के रंग में चाह मैं वूडै है याको चित्त को चाह्यौ करै हैं त्यौं त्यौं उज्वल होत है। या नायिका के लेषें अनेक नायिका को जो राग सो है मैल ताको त्यागिकै सुद्ध होत है।

—★—

हा हा वदन उघारि दृग। सफल करै सव कोइ। रोज सरोजनि कै परै। हसी ससी की होइ [०५३][127]

ہا ہا بدن اوکہار درک سپوہل کرین سب کوي • روج سروجن کي پري ہسي سسي کر ہوي [ظا• ٠٥٣]

अन० : मानिनी नायिका प्रति दूती सामोपाय करति है। हे नायिका हा हा कष्टं कष्टं वदन तू उघारि कहा ढांपि वैठी हौ सव कोई सव सषी दृग सफलु करे अरु सरोजनं को अरु ससी कों रोज हसी होइ। अव तांइ होत हती अव तेरे मान पिछै नांही होत सो होत जाय इति ध्वनिः। प्रतीपालंकार।

नर० : मांनमोचन सषी कौ वैन राधिका सौं। हे राधे हा हा हठ करि मत, वदन उघारि देहु ज्यौं तोके अवैलोकिकैं सव कोऊ नेत्र सफल करैं औरि सरोजन कौ रोवनो परै अरु चंद्रमा की हांसी ह्वै –

> सुंदर सोहनो आरसी सो मुष आय उघारि हा हा करौ वारी। याके विलोकतही सवके दृग जाति फले फल सो फुलवारी। रोज परै सगरेई सरोज को कोऊ वचै न हिए छवि न्यारी। जद्यपि सुद्ध सुधा सों भर्‌यौ ससि हो इह सी अवही तै महा री [नर० ०५३]

कृष्ण० : यह मुष वरनन है सु सषी नाइका सों कहै है –

> लोचनलहे को फलु सुफल हमारे करि प्यारी प्रानपति कै सनेहरस लीन करि। तैंही पाई परम निकाई की अवधि अव येती वृषभान की कुवरि अरवी न करि। टारि पट घूघुट कौ हा हा हे उघारि मुष निज छवि पानिप मै पीके नैन मीन करि। कंज छवि छीन करि ससिहि मलीन करि सौतिन को दीन करि प्यारे कौं अधीन करि [कृष्ण० ०५३]

हरि० : दिन में सषी को वचन मानिनी सों हा हा षाति हें, अति निहोरा करति हें यह अर्थ तुम वदन, मुष, कों उघारो, सव कोई सषीजन आपने दृग कों सफल करैं लछना सों नेत्र को सुष लेइ, यह अर्थ अवही फूले सरोजन कों रोज रोग होयगो। तेरो मुष कमल कों चंद्रमा को सत्रु है। सत्रु चौंर मित्र सौदर इत्यादि पद अर्थीउपमा के द्योतक है सत्रु सी सोभा देषि सत्रु को मन में दुष होय तासों रोज जानिए परे

---

[127] उघारि – 'र' में इकार बाद में - मो०; उघार - मु०वे०स०। दृग – द्रग - न०मि०नी०वे०; द्रिग - शि०मु०। करै – करो - उ०को०वा०; करें - मो०; करे - मु०; करैं - न०। सव – नर - स०। कोइ – कोउ - उ०; कोय - को०वा०ह०; सोइ - स०। सरोजनि – सरोजनु - उ०; सरोजन - को०मो०न०वे०गा०स०। कै – कैं - उ०मो०न०; कौं - को०; कें - शि०; के - पा०नी०गा०; कों - ह०। परै – परौं - उ०मो०; परे - नी०; परैं - गा०ह०; पर्‌यौ - वे०। हसी – हंसी - नी०ह०। ससी – शशी - शि०; शसी - वा०; सस - मो०। होइ – होउ - उ०; होय - को०ह०; होत - गा०। दोहा लुप्त - भा०। [०५३]